JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कुँअर बेचैन की ग़ज़लों में मानवीय संवेदनाओं का अध्ययन

शोधार्थी – किशोर कुमार

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर

शोध निर्देशक– डॉ. राजबाला (हिंदी विभाग)

ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर

शोध सारांश – कुँअर बेचैन हिंदी के मूर्धन्य ग़ज़लकार हैं। प्रस्तुत शोध आलेख में उनकी ग़ज़लों में निहित मानवीय संवेदनाओं का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। ग़ज़ल अपने लघु कलेवर और अथ गर्भत्व के कारण समकालीन साहित्य की एक प्रमुख विधा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। आज की ग़ज़ल केवल श्रृंगार की उथली बातें नहीं करती प्रत्युत मानव मन की हर एक संवेदना को स्वर देती है। कुँअर बेचैन की काव्य दृष्टि बड़ी सूक्ष्म और पैनी है। एक ओर वह भीड़ के बीच पलते अकेलेपन को भी भाँप लेती है तो दूसरी तरफ उस प्रेम पगे हृदय को भी देख सकती है जो अपने प्रेम से सबको अपना बना लेता है। उनकी ग़ज़लें मनुष्य को मनुष्य बनने का सन्देश देती हैं। स्वार्थ की अंधी दौड़ में मनुष्य अपनी मनुष्यता की सीमा से आगे निकल चुका है। अपने स्वाथ के लिए वह दूसरों को दबाना चाहता है। ऐसे में समाज में अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार और शोषण जैसी विकृतियाँ जन्म लेती हैं और उनकी प्रतिक्रिया स्वरूप विद्रोह की भावना भी पनपती है। व्यक्ति की महत्त्वकांक्षा की आग में नेह का नीर वाष्पित होकर घट गया है। सारे रिश्तें खोखले हो गए हैं। स्वार्थ सिद्धि ही उनका ध्येय हो गया है। कवि ऐसे रिष्तों को देखकर बहुत व्यथित होता है। इसलिए वह अपनी ग़ज़लों में प्रेम को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं। कवि जीवन के हर पहलू को सकारात्मक दृष्टि से देखने का पक्षधर है। सामाजिक अवमूल्यन और नैतिक पतन को देखकर उसका हृदय पसीजता है परन्तु इतने पर भी वह आशा का पल्लू नहीं छोड़ता। कवि बड़ी से बड़ी मुसीबत को सहर्ष स्वीकार करता है और अपने पूरे आत्मबल से उसका सामना करता है। कुँअर बेचैन की ग़ज़लें वाकई मन को बेचैन करती हैं। साफ सरल शब्दों में वे मनुष्य की हर संवेदना को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि पाठक को वे अपनी संवेदनाएँ लगने लगती हैं। प्रस्तुत शोध आलेख इन्हीं संवेदनाओं को गहराई से समझने का एक उपक्रम है।

मूल शब्द – संवेदना, प्रेम, दुःख, आशा, अकेलापन, सामाजिक चिंतन, मानवीय संवेदना, मनुष्यता,जिजीविषा, संघर्ष।

प्रस्तावना – कुँअर बेचैन हिंदी ग़ज़ल के सशक्त हस्ताक्षर हैं। इनकी ग़ज़लें वायवीय मनोभावों का माया महल नहीं बनाती प्रत्युत ठोस यथाथ के धरातल पर अपनी नींव रखती हैं। मानवीय संवेदना इनकी ग़ज़लों का केंद्रीय तत्त्व है। प्रेम, करुणा, पीड़ा, विद्रोह, आशा, अकेलापन, टूटन, रिष्तों की नाजुकता और सामाजिक चेतना उनकी ग़ज़लों के प्रमुख भावतत्त्व हैं। प्रस्तुत शोध–आलेख में कुंअर बेचैन की ग़ज़लों में निहित मानवीय संवेदनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। यह स्पष्ट किया गया है कि उनकी ग़ज़लें आधुनिक मनुष्य के भावनात्मक संघष और मानवीय मूल्यों की सशक्त अभिव्यिक्त है।

कुँअर बेचैन की ग़ज़लों में व्यक्त विविध मानवीय संवेदनाएँ––

प्रेम– प्रेम मनुष्यता का मूल तत्त्व है। बिना प्रेम के मानवता का विकास संभव नहीं है। प्रेम ही वह कड़ी है जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है। मनुष्य ही नहीं प्रत्युत पशु को भी प्रेम की आवश्यकता होती है। जीवन के सौंदय का सार तत्त्व प्रेम है। सूरदास के भ्रमरगीत में कृष्ण विरह में संतप्त गोपियाँ प्रेम को प्रतिष्ठित करती हुई कहती हैं **"प्रेम प्रेम सों होय प्रेम सों पारहि जैए। प्रेम बँध्यो संसार, प्रेम परमारथ पैए॥"** अर्थात प्रेम ही वह नौका है जो मनुष्य को संसार सागर से पार लगाती है और प्रेम ही संपूर्ण संसार को एक सूत्र में बांधता है। प्रेम भक्ति की नींव है। जब प्रेम का आलंबन ईश्वर बन जाता है तो उसे वही प्रेम भक्ति हो जाता है और ऐसा प्रेम अंततः परमाथ को प्राप्त कर लेता है। कुंवर बेचैन की ग़ज़लें प्रेम के बिना अधूरी है। उनकी ग़ज़लों में सात्विक प्रेम की सहज अभिव्यिक्त मिलती है।

सर्वस्व समर्पण के बिना प्रेम परवान नहीं चढ़ता। प्रेम में प्रेमी एक–दूसरे के पूरक बन जाते हैं। कुंअर बेचैन लिखते हैं–

आँखें हूँ अगर मैं, तो मेरा तू ही ख्वाब है

मैं प्रश्न अगर हूँ तो मेरा तू जवाब है

मैं क्यों ना पढ़ूँ रोज नई चाहत से तुझे

तू घर में मेरे एक भजन की किताब है

अपनी प्रिया को **"भजन की किताब"** की उपमा देकर कवि ने प्रेम की सात्विकता को अनूठी व्यंजना दी है। जहाँ प्रेम होता है वहाँ पीड़ा भी होती है। पास आए बिना टकराया नहीं जा सकता, जो दूर–दूर है उनके टकराने की कोई संभावना नहीं होती परंतु जो पास होता है वह हमें चोटिल भी कर सकता है और मरहम लगाकर सहला भी सकता है। इन दो मतलों में ग़ज़लकार ने प्रेम के इस द्वंद्व को बड़ी बारीकी से उद्घाटित किया है–

और तो सब ठीक है, हाँ एक यह उलझन भी है

वो जो मेरा दोस्त है वो ही मेरा दुश्मन भी है

और

फफोलों में भरा पानी हमें यह भी बताता है

जलन देता है जो हमको लगी वो ही बुझाता है

यहाँ फफोलों के पानी का जो बिम्ब उकेरा गया है वह कवि की नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा को प्रमाणित करता है।

प्रेम के कई स्वरूप होते हैं और वात्सल्य उनमें से एक है। बड़ें–बुजुर्ग हमेशा यही चाहते हैं कि उनकी संतति सुखी रहे। संस्कृत में उक्ति है **"सर्वत्र जयमिच्छेत पुत्रात् शिष्यात् पराजयं।"** मनुष्य हर जगह जीतना चाहता है पर जहाँ बात संतान अथवा शिष्य की हो वहाँ पराजय उसे श्रेयस्कर लगती है क्योंकि वह चाहता है कि उसकी संतानें उससे भी बढ़कर हो। जड़ें शाखों की हरियाली में खुश है बड़े बच्चों की खुशहाली में खुश है यहाँ कवि ने बड़ा ही गहरा बिम्ब उकेरा है। जड़ें पेड़ को पोषण देती हैं और उसे जमीन से जोड़कर भी रखती हैं लेकिन रहती वे हमेशा नेपथ्य में ही हैं। वैसे ही माता–पिता और बड़ें–बुजुर्ग अपनी संतान को एक ठोस आधार प्रदान करते हैं और उसका पालन पोषण कर उसे योग्य बनाते हैं। पेड़ जड़ों की बदौलत ही हरा–भरा रहता है और फलता फूलता है परंतु जड़ें कभी सामने नहीं आती। वे पेड़ को हरा भरा देखकर खुश रहती हैं।

जिस प्रकार माता पिता संतान से प्रेम करते हैं वैसे ही संतान भी माता–पिता से बहुत प्रेम करती है। माँ के प्रति संतान के पवित्र प्रेम को कवि ने उसी पवित्रता के साथ प्रस्तुत किया है–

बदन से तेरे आती है मुझे ऐ माँ वही खुशबू

जो एक पूजा के दीपक में पिघलती घी से आती है

और

जिसमें माँ और बाप की सेवा का शुभ संकल्प हो

चाहता हूँ मैं भी काँधे पर वही काँवर रखूं

प्रेम में संकुचन और संचय के लिए कोई अवकाश नहीं है। प्रेम की कोई परिधि नहीं होती वह विस्तार में ही पनप सकता है। जहाँ संकुचन है वहाँ मोह तो हो सकता है पर प्रेम नहीं। कवि कहता है–

वह किसी भी जाति की हो या किसी मजहब की हो

प्यार की बोली में सारी बोलियाँ आ जाएगी

प्रेम की भाषा सीधी, सरल और सर्वव्यापी है। वह देश–काल के अनुसार बदलती नहीं। वह ऐसी बोली है जिसे हर कोई समझता है। प्रेम की स्निग्धता ना हो तो जीवन के पुर्जे चरमरा जाएंगे। जिसका हृदय विशाल है, जो प्रेम देना जानता है वह हर किसी को अपना बना लेता है। यह एक ऐसी सम्पदा है जो लुटाने से ही बढ़ती है–

लुटाओ जितना उतनी ही बढ़ेगी

मोहब्बत है ही एक ऐसा खजाना

आशा – कुँअर बेचैन की ग़ज़लों में जीवन के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण देखने को मिलता है जो कठिन से कठिन परिस्थिति में भी मनुष्य को डिगने नहीं देता। वे यह मानते हैं कि जीवन एक संघर्ष है परन्तु वे संघर्ष से न घबराते हैं न पालयन करते हैं अपितु वे आशा की कृपाण लेकर इसमें जूँझते हैं–

जो डर जाते हैं डर जाने से पहले

वो मर जाते है मर जाने से पहले

उनकी जिजीविषा और जीवटता उन्हें सदैव उत्साहित रखती है। वे हर बाधा को सहर्ष स्वीकार ही नहीं करते प्रत्युत उसका आभार व्यक्त करते हैं क्योंकि बाधाएँ ही मनुष्य को गढ़ती हैं और बाधाओं से टकराकर ही मनुष्य उन्नति करता है। एक रास्ता बंद होने पर वे बैठकर शोक नहीं मनाते बल्कि अपने दम पर एक नया रास्ता बनाते हैं जो उनको पहले से अधिक ऊँचा उठा देता है। वे लिखते हैं–

चोटों पे चोट देते ही जाने का शुक्रिया

पत्थर को बुत की शक्ल में लाने का शुक्रिया

आती न तुम तो क्यों मैं बनाता ये सीढ़ियाँ

दीवारों, मेरी राह में आने का शुक्रिया

और

उसको भी तू पूज लिया कर,

जिस पत्थर ने ठोकर दी है।

यह आशावादी दृष्टिकोण उनको हमेशा आगे बढ़ाता है। रुकना उनको कतई स्वीकार नहीं है। बड़े से बड़ा दुःख क्यों न हो ज्यादा समय नहीं रहता। जब समय बदलता है तो परिस्थितियों भी बदल जाती हैं परंतु तब तक मनुष्य को आशा की डोर को पकड़े रहना चाहिए और अपनी ओर से सकारात्मक प्रयास जारी रखने चाहिए। कवि लिखते हैं–

इन दुःखों के कैद खानों में भी बस चलते रहो

है अभी दीवार आगे खिड़कियाँ आ जाएगी

दुःख– दुःख जीवन का कटु सत्य है। सुख–दुःख एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और दोनों का अपना अपना महत्त्व है। जैसे भूख के बिना भोजन का कोई महत्त्व नहीं रहता वैसे ही दुःख के बिना सारे सुख भी नीरस है। यह व्यक्ति को वास्तविकता से अवगत करवाता है और भविष्य के लिए तैयार करता है। परन्तु जब दुःख आता है तो वो लोग जो आपसे कदम मिलाकर चलते थे वो सब पाँव पीछे हटा लेते हैं। दुनिया सुख के पीछे भागती है, किसी के दुःख में दुःखी होना उसकी फितरत नहीं है। वास्तव में हर नाते के पीछे कहीं न कहीं स्वार्थ की एक डोर जुड़ी होती है। जब स्वार्थ की सिद्धि रुक जाती है तो हर रश्ते का रंग हल्का पड़ने लगता है, हमेशा साथ रहती है तो बस एक पीड़ा–

रिश्ते नाते झूठे हैं सब

केवल तेरी पीर सगी है

जो जीत जाता है दुनिया उसी की हो जाती है। हारे हुए से सब पल्ला झाड़ देते हैं। दुःख वास्तव में सम्बन्धों की कसौटी है और इस कसौटी पर कुछ ही लोग खरे उतरते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं **"धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।।"** जो दुःख में साथ है वही सच्चा साथी है, बाकी सब आपकी योग्यता से अपना लाभ चाहने वाले अवसरवादी लोग हैं। लोग पत्थर में भगवान मानकर उसे पूजतें हैं लेकिन जीवन संघर्ष में हारे हुए इंसान का हौसला बढ़ाकर उसे फिर लड़ने के लिए तैयार करने से कतराते हैं। कवि दृष्टि में हारे हुए को हौसला देना भी ईश्वर की ही सेवा है।

पत्थरों को पूजने वालों से इतना पूछिए

क्या कभी बैठे हैं दो पल भी थके हारे के साथ

मौत के मारे हुए को तो कई काँधे मिले

कौन चलता है कुँअर यूँ वक्त के मारे के साथ

एक पिता अपनी संतान के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार होता है। वह उसे संसार की हर खुशी देना चाहता है। लेकिन तमाम कोशिशों के बावजूद जब आर्थिक तंगी के चलते वह उनकी इच्छा पूरी नहीं कर पाता तो इसका दद उसे कितना सालता है यह इस शेर में देखा जा सकता है–

मैं खाली हाथ हूँ डर लग रहा है

मुझे अपने ही घर जाने से पहले

इसी दर्द को मशहूर समकालीन शायर राजेश रेड्डी ने भी कुछ तरह बयां किया है–

शाम को जिस वक्त खाली हाथ घर जाता हूँ मैं,

मुस्कुरा देते है बच्चे और मर जाता हूँ मैं

आत्मसम्मान– इस प्रतिस्पर्धा के दौर में हर कोई आगे बढ़ना चाहता है और इसके लिए वह दूसरे को गिराने की फिराक में रहता है। सफलता के लिए कई पैंतरें आजमाए जाते हैं।

रिश्वतखोरी, पद का दुरुपयोग, चाटुकारिता आदि से सब कम समय में और बिना प्रयास के वांछित सफलता प्राप्त करना चाहते हैं। दूसरों का हक छीनकर लोग अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। लेकिन कुछ लोग खुद्दार भी होते है, जो अपनी उन्नति तो चाहते है लेकिन अपने दम पर। यह आत्मनिर्भरता कुँअर बेचैन के व्यक्तित्व की अपनी विशेषता है। खैरात में मिली सफलता उनको अभीष्ट नहीं। वो कहते हैं–

हाँ, मुझे उड़ना है लेकिन इसका मतलब यह नहीं

अपने सच्चे बाजुओं में इसके–उसके पर रखूँ।

और

लोग उसके बारे में अच्छा कहें चाहे बुरा

मैं कुँअर से मिल चुका हूँ आदमी खुद्दार है

अगर खुद्दारी को खोकर ही आगे बढ़ा जा सकता हो और कोई अन्य विकल्प न हो तो तो कवि कहता है

है जिसके साथ एक सच का खजाना

हम अपनी ऐसी कंगाली में खुश हैं।

वे मेहनत को सर्वपरि मानते हैं। उनकी दृष्टि में इसके अतिरिक्त सफलता का कोई विकल्प नहीं है। किस्मत का रोना वे कभी नहीं रोते। वे अपनी किस्मत अपने हाथों से लिखने वालों में से हैं–

क्यों हथेली की लकीरों से हैं आगे ऊँगलियाँ

रब ने भी किस्मत से आगे आपकी मेहनत रखी

और

मेरे हाथों की यह जो ऊँगलियाँ हैं

पसीने की नदी में किश्तयाँ हैं

विद्रोह – शक्ति सम्पन्न लोग अक्सर दूसरों को दबाकर मोटा लाभ कमाते हैं। सत्ता और संसाधनों पर उनकी गहरी पकड़ होती है। वे लोग निम्न और मध्यम वग का शोषण करते हैं और उन्हें कभी ऊँचा उठने ही नहीं देते। जब निम्न–मध्यम वर्ग की यह पीड़ा असहनीय हो जाती है तब उनके मन में विद्रोह का भाव पैदा होता है और विद्रोह की यह चिंगारी दावानल का रूप लें उससे पहले कवि शक्ति सम्पन्न वर्ग को चेतावनी देना चाहता है–

अब आग के लिबास को ज्यादा न दाबिए,

सुलगी हुई कपास को ज्यादा न दाबिए ।

ऐसा न हो कि उँगलियाँ घायल पड़ी मिलें,

चटके हुए गिलास को ज़्यादा न दाबिए ।

जो भोले–भाले मेहनतकश और खुद्दारी से जीने वाले लोग हैं। जो **"कोउ नृप होउ हमहि का हानि "** की भावना रखने वाले हैं। जो सत्ता की राजनीति से अनभिज्ञ और अछूते हैं। जिनके भीतर अब भी प्रेम की शीतल धारा प्रवाहित होती है। उनको मजबूर करके ये दुनिया वाले उनके भीतर विद्रोह का उबाल लाने पर तुले हुए है। ऐसे में कवि ने लिखा है–

मैं किसी फूल की पँखुरी पर पड़ी शबनम हूँ

मुझको अंगार बनाने पर तुली है दुनिया

मृत्यु बोध – कुँअर बेचैन जीवन के प्रति बहुत सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। लेकिन वे मौत से भी घबराते नहीं हैं। जिस प्रेम से वह जीवन को स्वीकार करते हैं उसी प्रेम से वे मृत्यु का भी अभिनन्दन करते हैं। मृत्यु एक अटल सत्य है इसे जितना शीघ्र हो सके स्वीकार करना चाहिए तभी जीवन का आनंद लिया जा सकता है। कवि इस सत्य को स्वीकार करते हुए कहता है–

मौत तो आनी है तो फिर मौत का क्यूँ डर रखूँ

जिंदगी आ तेरे कदमों पर मैं अपना कर रखूँ

मनुष्य अपने लाभ के लिए छल कपट करता है, अर्थ संचित करता है। लोगों में अपनी प्रतिष्ठा की धौंस जमाना चाहता है। उसका अहम् उससे न जाने कैसे–कैसे कम करवाता है। मगर जीवन में एक क्षण आता है जब उसका सारा रसूख छूट जाता है। उसकी कंचन जैसी काया प्राण विहीन होकर पड़ी होती है। उसकी सारी प्रतिष्ठा मिट्टी हो जाती है। मनुष्य कितने भी यत्न कर ले वह मृत्यु से पीछा नहीं छुड़ा सकता। इसलिए शायर कहता है–

हमें भी मौत एक दिन छोड़ देगी

हवा रहती है गुब्बारों में कब तक

हमें भी राख होना है किसी दिन

रहेगी आग अंगारों में कब तक

अकेलापन – आज का मनुष्य जीवन की आपधापी में इतना व्यस्त हो गया है कि सारे रिश्तें–नातें पीछे छूट गए हैं। ऐसे में जब कभी वह पीछे मुड़कर देखता है तो अपने आप को भीड़ के बीच भी अकेला पाता है और यही कहानी उस भीड़ में खड़े हर आदमी की है। कवि कहता है–

किस कदर तन्हा हुए हम शहर की इस भीड़ में

यह भटकती भीड़ की तन्हाइयों को क्या खबर

इस शेर का मर्म बहुत गहरा है। व्यक्ति भीड़ में अकेला है और वह भीड़ भी अपने आप में अकेली है। यह बड़ा विचित्र है परन्तु सत्य है। व्यक्ति की महत्त्वकांक्षाओं ने उसे सबसे अलग थलग कर दिया है। सम्बन्धों में जो प्रेम हुआ करता था वो जाता रहा और अब केवल खोखला ढांचा बचा हुआ है। ऐसे खोखले रिष्तों में न कोई वजन है न पहले जैसी मजबूती। ऐसे रश्तें भला समय के आघातों के सामने कब तक ठहर सकते हैं। कवि ने कहा है–

इन दुरूखों में अपने रिष्तों पर कुँअर इतना यकीन

क्यों खिजाँ में ढूंढता है तितलियाँ पागल है क्या

सामाजिक चिंतन– किसी भी साहित्यकार के साहित्य का उपजीव्य समाज ही होता है। समाज से पृथक रहकर जो साहित्य रचा जाता है वह परीलोक की कथाओं सा रोचक तो हो सकता है परन्तु उसकी उपदेयता शून्य होती है। कुँअर बेचैन सामाजिक सरोकारों से जुड़े कवि हैं। इनके साहित्य में समाज के वर्तमान और भविष्य का गहरा चिंतन देखने हो मिलता है। बदलते सामाजिक मूल्यों और नैतिक पतन को देखकर कवि का मन व्यथित होता है। समाज में कुछ विकृत मानसिकता वाले लोग हैं जो सामाजिक मूल्यों का हनन करते हैं। सीधे–सच्चे लोगों को भी समाज की विसंगतियाँ औरों जैसा बनने पर मजबूर करती हैं।

हमने लोहे को गला कर जो खिलौने ढाले

उनको हथियार बनाने पे तुली है दुनिया

मनुष्य को स्वाथ ने इतना अंधा कर दिया कि वह मन की उन कोमल भावनाओं को कुचलता हुआ जा रहा है जो मनुष्य को मनुष्य बनाती हैं। बाजारवाद इतना हावी हो गया है कि रश्तें–नातें भी अब बाजारू हो गए हैं। प्रेम जैसी अनमोल वस्तु भी अब बाजार की चीज हो गई है।

प्यार पूजा घर था पहले अब तो बस बाजार है

जिसको देखो वह ही बिकने के लिए तैयार है

आजकल हर चीज में बनावटीपन आ गया है। मनुष्य की भावनाएँ भी बनावटी हो गई हैं। अब भावनाएँ सच्चे हृदय से निसृत नहीं होती अपितु उनका अभिनय किया जाता है। दिखावे के लिए व्यक्ति अपनी वास्तविकता पर झूठ का रुपहला आवरण डाल रहा है। कुँअर बेचैन कहते हैं–

कीमती कालीन जब से मेरे घर में बिछ गए

बेहिचक घर आने–जाने की अदा जाती रही

नकली मुस्कानों के हमले होठों पर कुछ यूँ हुए

सच्चे दिल से मुस्कुराने की अदा जाती रही

निष्कर्ष –

कुँअर बेचैन की ग़ज़लें मानवीय संवेदनाओं का जीवंत दस्तावेज हैं। वे मानव मन में परत दर परत गहरी उतरती जाती हैं। बहुत सरल और चलती हुई भाषा में विविध बिम्बों के द्वारा कवि ने अपनी अनुभूतियों को अभिव्यिक्त दी है। इनकी ग़ज़लें बदलते सामाजिक एवं पारिवारिक मूल्यों के बीच व्यक्ति की मनोदशा का चित्रण करती है। इस घुटन और कुंठा से भरे दौर में अमृत बूंदो सी इनकी ग़ज़लें व्यक्ति में नव आशा का संचार करती हैं। इनकी ग़ज़लें थके हारे व्यिक्त को फिर से उठने का हौसला देती हैं। एक–एक शेर संवेदना से सराबोर है। कहीं भी भाषिक चमत्कार के लिए कोई आडंबर रचना उनको गवारा नहीं। मन की बातें मन तक तभी पहुँच सकती हैं जब उसे एक ऐसी आसान भाषा में कहा जाए जिसे कोई अनपढ़ भी समझ पाए और कुँअर बेचैन ऐसी ही भाषा के धनी हैं। मनुष्य के भाव–लोक के जितने रंग हो सकते हैं सब उनकी ग़ज़लों में देखने को मिल जाते हैं। सुख–दुःख, प्रेम–वैराग्य, आशा–निराशा, टूटते सम्बन्ध और उससे उपजा अलगाव और अकेलापन, कुंठा, व्यवस्था के प्रति मोहभंग आदि उनकी ग़ज़लों में उभरकर सामने आते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. शामियाने काँच के, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद, 1983.

2. महावर इंतजारों का, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद, 1983.

3. रिस्सयाँ पानी की, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद, 1987.

4. पत्थर की बाँसुरी, डॉ. कुँअर बेचैन, अयन प्रकाशन, गाजियाबाद, 1990.

5. दीवारों पर दस्तक, डॉ. कुँअर बेचैन, अयन प्रकाशन, गाजियाबाद, 1991.

6. नाव बनता हुआ कागज, डॉ. कुँअर बेचैन, अयन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990.

7. आग पर कंदील, डॉ. कुँअर बेचैन, अयन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995.

8. आँधियों में पेड़, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद, 1996.

9. आठ सुरों की बाँसुरी, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद, 1996.

10. आँगन की अलगनी, डॉ. कुँअर बेचैन, प्रगीत प्रकाशन, गाजियाबाद,1997.

11. .....तो सुबह हो, डॉ. कुँअर बेचैन, अमृत प्रकाशन, दिल्ली, 2001.

12. कोई आवाज देता है, डॉ. कुँअर बेचैन, हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर, 2005.

13. आँधियाँ धीरे चलो, डॉ. कुँअर बेचैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली से 2006

14. धूप चली मीलों तक, डॉ. कुँअर बेचैन, दिव्यांश पब्लिकेशन्स, लखनऊ, 2010

15. ग़ज़लः शिल्प और संवेदना, नरेश, हरियाणा साहित्य अकादमी, चडीगढ़, 1991

16. डॉ. कुँअर बेचैन सृजन के विविध आयाम, सविता मिश्र, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009.

17. हिंदी ग़ज़ल का वर्तमान दशक, सरदार मुजावर, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2001.

18. हिंदी ग़ज़ल ग़ज़लकारों की नजर में, सरदार मुजावर, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2001.